परमहंस श्री सद्‌गुरु फुलाजी बाबा

इनका संक्षिप्त जीवन चरित्र

मै मरनेवाला हूँ

मेरा ध्यान मरनेवाला है

किंतू मेरा ग्यान कभी मरनेवाला नही।

-परमहंस सद्‌गुरु श्री फुलाजी बाबा

प्रथम आवृत्ती	:	नोव्हेंबर २०१३
प्रती	:	२०००
देणगी मुल्य	:	१५/-
मुद्रक	:	**सचिन ऑफसेट प्रिंटर्स,किनवट,** जि.नांदेड (महाराष्ट्र)
अक्षरजुळवणी	:	सचिन बाबुराव कोंडे

प्रकाशक

सिध्दमहायोग पीठ

श्री सिध्देश्वर संस्थान, पटणापूर

मंडळ जैनूर ता.उटनूर जि.आदिलाबाद(आंध्रप्रदेश)

सभी हक्क प्रकाशकके स्वाधीन किए गये है. प्रकाशक की अनुमती के बिना इस किताब का मुद्रण, व्हिडीओ, ऑडीओ कॅसेट प्रकाशीत करना सक्त मना है.

Justice Motilal B. Naik
High Court Judge
Kundan Bagh, Begumpet,
Hyderabad-500 016.

सन्नुती

परमहंस फुलाजी बाबा एक अवतारी पुरुष-संत हैं। वे समाजकल्याण के लिए जन्म लिए हैं। समाज में धार्मिक चिंतन कमी होने के कारण, बिगडा हुये मानव समाज को सही रास्तेपर चलाने के लिए, छल-कपट, आडंबर व्यवहार को दुर करके सहजरुप से ज्ञान बढाने के लिए, वे भगवान के प्रेरणा से निस्वार्थ प्रयास कर रहे हैं। मानव अपने कर्तव्य को निभाने के लिए पशु प्रवृत्ती से छूटकारा पाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहना ही, उनका उपदेश का सार हैं।

उनके संगति में आनेवाले साधक को, बाबा सबकुछ देते हैं। यह मेरे अनुभव की बात हैं। दरिद्रनारायण को नारायण बनाना ही उनका लक्ष हैं। ध्यान मार्गका मार्गदर्शन देते हूए, समाज में गढा हुआ जाती-वर्ण मत-विभेदों को उखाडकर, सबमें संधीभाव, एकता, समानताऔर प्रेमकों बढा रहें है। आपस में पशुपक्षी भी मिल जुलकर रहतें हैं। उनको देखकर भी मनुष्य सोच समझकर चलना आवश्यक हैं। साईबाबा ने जैसे समता दृष्टि से मानव कल्याण के लिए अपना जीवनदान दिया था, वैसा ही श्री फुलाजी बाबा भी उसी मार्ग में निराडंबरता पूर्वक समाज सुधारने के लिए अविश्राम प्रयत्न कर रहें हैं।

मोतीलाल बि. नायक

श्री शशिधरराव
D.E.O. (A) UTNOOR

प्रस्तावना

हजारो महानुभाव उनेमेंसे कुछही दैवंश सबुत रहते है। उसी राह पर चलनेवाले श्री परमहंस सद्‌गुरु फुलाीबाबा एक है। बाबाके उपदेशका सारांश यह है की अपार प्रेम दृढ विश्वास ही सद्‌गुरु तक पहूंचनेका मार्ग है। श्री फुलाजीबाबाके उपदेशोके महत्य के बारे में श्री रंगाचार्य लिखीत ग्रंथ में प्रस्तावना लिखना मेरा महाभाग्य समजता हुँ। बाबा एक साधारण व्यक्ती जैसा निराडम्बर से रहते हुये भक्तोंको दर्शन देते। उनको आनंद देते। छोटे बच्चोंसे लेकर बडोतक हर एक के दुख दर्द सुनकर सही रास्ता बताते हुये बहुत बार देख चुका हुँ। मै आदिलाबाद जिल्हा ऐ.टि.डी.ए उटनूर में एंजन्सी विद्या शाखा -धिकारी दर्जा में रहते समय चार-पाच बार बाबाके दर्शन लिया था। बाबा हमारे घर भी आये थे। कुछ भी विषय के बारे मे चर्चा करनेपर बाबा हँसते हँसते भगवदगीता इत्यादी अपुर्वग्रंथ के आधारसे समाधान देते है। हर समाजके लोक उन पर विश्वास करते है, उनपर आर्शिवाद की छाया हरपल रहती है। प्रेम और दृढ विश्वास ही अपजयसे बचाकर विजय प्राप्त कर सकती है।

श्री फुलाजी बाबाके दर्शन पाने के लिए बहुत दुर-दुर से लोग हजारो संख्यामें आते है। उन सभी को आर्शिवाद और स्पर्श में भक्तों का पालन करना प्रत्यक्ष देख चुका हुँ। विश्वास ही सबसे बडा धन है। विश्वास पर चलनेवालोको फल जरुर मिलेगा।

श्री परमहंस सद्‌गुरु फुलाजीबाबाके बारे में लिखा श्रीरंगाचार्य को मेरा अभिनंदन।

हैद्राबाद **(के.शशिधरराव)**

M.TUKARAM (I.A.S)
Director of Distelleries & Breweries
(A.P.)

In the interior and most backward areas of Adilabad districts, a yeoman's service is being rendered in the field of upbringing the people,regardless of their caste and creed, on the path of dharma and good life.

It is by the reveened param Shri yogi Phulaji Baba, who is indeed a great Mahatma and Maharshi.

Soon the Divine presence began to surface at the place of his living with the truth-telling tongue and solace-giving healing touch, the place of penance and samadhi where he intended to go in alive, has turn out to be a regular pilgrimage for the people coming in scores from the far and near places. It has become a Maharshi Baba Ashrams at more than Seven places in the neighbouring districts also.

श्री संत फुलाजी बाबा इनको वैदिक परंपरा के अनुसार प्राप्त हुवा
दिव्य शक्तिपात योगदिक्षा अधिकार,

भारत के अध्यात्मिक संस्कृती की जो विशेषताएँ है इनमें शक्तिपात योग का स्थान अतिश्रेष्ठ है। भारतीय वेदकाल से आजतक अवतारी पुरुष, ऋषी-मुनी, संत, महंत आदि ने इस मार्ग को अपनाया है।

श्री आदिनाथ शंकर से लेकर सभी ने अपनी परंपरासे प्राप्त इस विद्या का साधकके उपर अनुग्रह करके असका परमेश्वर प्राप्ति के लिए उपयोग किया है। पंरपरा, पध्दती कोई भी क्यों ना हो? साधक में शक्ति संक्रमण प्राप्त होना यह मूल तत्व है, क्योंकि अध्यात्मिक मार्ग में शक्तिपात दिक्षा यह सभीसे श्रेष्ठ है। इस अपुर्व अनुभूती के कारण श्री संत ज्ञानेश्वर महाराज इन्होंने इस मार्ग को 'पंथराज' (सहजसमाधि) कहा है। ज्ञानेश्वरी,अ-१८-९६६,दिव्य ऐसे परमेश्वरी शांभवी शक्ति के ब्रम्ह प्राप्ती के लिए शिष्य के उपर किया गया अनुग्रह यही शक्तिपात है।

भगवत स्वरूप सद्गुरु के अनुग्रह से शक्तिपात होकर कुंडलिनी जागृत हुये बिगर अध्यात्मीक जीवन की उचित प्राप्ती नही हो सकती। सुप्त भगवती जब तक पुर्णतः जागृत नही होती, तबतक मनुष्य जीवन का सार्थक नही हो सकता। 'भारतीय संस्कृती और साधना' इस ग्रंथ के मनुष्यत्व अध्याय में श्री गोपीनाथ महाराज कहते है, 'भगवान शंकराचार्य ने भी महापुरुष के आश्रय की महिमा मुक्त कंठ से स्पष्ट की है।'

वह महापुरुष दुसरा कोई भी न होकर स्वयं सदगुरु है। ऐसे मानव देहधारी सदगुरु भ्रांत जीवन के अपने मूल स्वरुप की और पहुँचकर उन्हे चैतन्यमय प्राप्त करने वाले अधिकारी बनाते है। एक साधक को अगर दुर्लभ जैसे तीव्र वैराग्य निवृत्ती भाव तथा मुक्ति की तीव्रतम आकांक्षा स्वयं उत्तम तरहसे प्राप्त हो जाती है तभी भी उनको अती दुर्लभ सदगुरु कृपा की प्राप्ती करके लेना अपरिहार्य तथा आवश्यक होता है।

भ्रांत जीवन में ब्रह्मांनद प्राप्त कराना यह अधिकार केवल परमेश्वर को ही है क्या? पंरतू मुक्त पुरुष को भी एक यह अधिकार प्राप्त होता है।

भारतीय अध्यात्मिक संकल्पना की हमे जब कल्पना आती है, तब हमारा मन कृतज्ञ हो जाता है। शक्तिपात योग इस दिव्य परंपरा का जब इतिहास देखते है, तब हमें यह दिखाई देता है की, इस प्रवाह में स्नान करके हम धन्य हो जायें ऐसी इच्छा अगर मन में उत्पन्न हो जाती है तो अनुचित नही होगा।

यह शक्तिपात योग दिक्षा वर्तमानकाल में श्री सिध्दमहायोगी सदगुरु परमहंस फुलाजीबाबा इनके व्दारा अनेक व्यक्तीयों को दि जा रही है। प्रत्येक मनुष्य नें उनका दर्शन लेकर कृतज्ञ होना चाहिये।

श्री सिध्द महायोग के सिध्दमहायोग-पीठ-सिध्देश्वर संस्थान, पटणापूर मंडल जैनूर जि.आदिलाबाद

‘ मृग की नाभी में कस्तुरी का गंध ’

कुछ हिरण की नाभी में कस्तुरी होती है। हिरण के दौडनेसे कस्तुरी का गंध उसकी नाक में घुमता है। इस मधुर गंध की खोज के लिए वह और भी तेज गती से दौडने लगता है। यह सुंगध कहाँ है? इसें मै कहाँ खोजू? वह मुझे कैसे प्राप्त होगा? ऐसे प्रश्न उसके मन मे आकर वह पागल की तरह दौडने लगता है। पंरतु उस हिरण को यह पता नही होता है की, इस कस्तुरी का मधुर सुगंध उसकी नाभी में छुपा है।

यही अवस्था हमारे मनुष्य जीवन की हो गयी है। इस शरीररुपी मंदीर में आत्मरुपी परमेश्वर अपने अंतर में प्रत्यक्ष रुप से बसा है। पंरतु मनुष्य उसकी खोज अपने अंतर्मन में न करके इधर-उधर भटक रहा है। इसलिये संत कबीरदास कहते है, बाहय रुप में परमेश्वर नही है। उसकी खोज के लिए अंतर्मुख हो जाईये। साधना मे मग्न हो जाईये, ईश्वर स्वयं अपने आप में नजर आयेगा।

- संत कबीर

‘ श्री परमहंस श्री सदगुरु फुलाजी बाबा इनका संक्षिप्त चरित्र ’

महाराष्ट्र के हिंगोली जिलें के औंढा नागनाथ तालुका के, ‘सावली’ इस गांव में श्री परमहंस फुलाजी बाबा इनका जन्म दिनांक ३०/०८/१९२५ को हुवा। उनके पिताजी धोंडुजी इंगले एक आदिवासी समाज के लोकप्रिय तथा निष्ठावंत व्यक्ति थे। माँ श्रीमती पुंजाबाई धोंडीबा इंगले यह शांत तथा शिलवान एवं गुणवान तथा धार्मिक प्रवृत्ती की थी। परिवार का उदरनिर्वाह और पालनपोषण करने के लिए वह मजदुरी करते थे। इतना करने के पश्चात दो समय की रोटी भी उन्हें नसीब नही होती थी। यह परिवार अत्यंत कष्ट सें अपनी रोजी-रोटी जुटा पाता था। इस ‘विश्वविधाता’ ईश्वर की महिमा ही अलग है। उदरनिर्वाह की खोंज में यह परिवार आंध्रप्रदेश में पहुँच गया। आदिलाबाद जिले के उटणूर तालुका, पटणापूर इस गाँव में (अंदाजा सन १९३४ में) स्थायी रुपसें बस गया। सरकार की ओंर से प्राप्त जमीन के उपर मेहनत करके उनका परिवार अपना उदरनिर्वाह करने लगा। ऐसे कष्ट करते हूए कुछ दिन बित गये। पंरतु दारिद्रय और कष्ट से अपना पेट भरना भी उन्हें कठीण हो रहा था। मानो जैसे गरिबी उनका पिछा ही कर रही थी। इस परिस्थिती में सालों तक वे अपना जीवन व्यतीत करते रहे। कुछ दिनों के उपरांत उनके विचार में परिवर्तन आयें और वापस अपनी जन्मभुमी हिंगोली जिले के ‘टाकली’ इस गाँव मे जाकर स्थायी रुपसें अपनी दिनचर्या व्यतित करने लगे। कुछ सालों बाद परिवार की जनसंख्या में वृध्दि हुई। पंरतु आर्थिक परिस्थिती में कोई बदलाव नही आया। इस दारिद्रय और गरिबी का सामना करना परिवार के लिए कठिण हो गया था। इस समय पुनः पटणापूर आकर यह परिवार बस गया। फुलाजीबाबा बचपन सें ही अपने पिताजी को खेती के व्यवसाय में मदद करते थें। उनके परिवार में गरिबी होने के कारण बाबा कों पाठशाला में जाकर शिक्षा प्राप्त करना संभव नही हुवा, ना उन्हें शिक्षा का गंध था। उनकी बालअवस्था में माँ-बाप का देहान्त होने के कारण उस परिस्थीती में बालक फुलाजी,दो बहनें,एक छोटा भाई यह सभी अनाथ हो गये। तब उनके काका कालुजी इंगले इन्होने उन्हे आश्रय दिया। फुलाजी बाबा में बचपन से ही सत्यवादी,विनय,विनम्रता और सत्यधर्माचरण यह गुण थे। इसलिये उनके काकाजी कालुजी इंगले इनके लिये बाबा कम समय में प्रिय बन गये।

उनका विवाह होने के पश्चात दोन्हों भाईयों को अपने पैरों के बल पर खडा करके उनका मनोबल बढाने का काम बाबा ने किया। जंगल मे वृक्षतोड करके अपनी जमीन को उन्होने बढाया। रात दिन मेहनत करके दारिद्रय को पिछे छोडते हुये बाबा का परिवार एक-एक कदम आगे बढने के लिए रात-दिन मेहनत करने लगा। बाल अवस्था में ही शुध्द आचरण के गुण उनमें होने के कारण महात्मा के लक्षण बाबामें दिखाई देने लगे। उस समय गाँव में ग्रामसेवक,सरपंच,पोलिस पाटिल आदि लोगों ने गरीब तथा पिडीत आदिवासींयोंको लुटकर उन्हें अपने घर और खेती के काम में लगाने का धंदा चला रखा था। इन गरीब, अनपढ, कमजोर परिवारों की मजबुरी का फायदा बडे लोग उठाते

थे। इन बडे लोगों से गरीब लोगो पर जो अन्याय होता था, वह बाबा को सहन नही होता था। गरीब लोगोंपर होनेवाले अन्याय, अत्याचार इनके बारेमें सरपंच,पोलीस पाटील,ग्रामसेवक इनके साथ चर्चा करने के पश्चात गरीब लोगों को न्याय दिलाने का महान कार्य बाबा करने लगे। कुछ दिनो के बाद बाबा का संपर्क पढेलिखे लोगों से आने लगा। विशेष रुपसे श्री गणपत वाडगुरे मास्टर इनके संपर्कमें आनेसे और उनके मार्गादर्शन सें बाबा को मुलाक्षरों की पहचान होने लगी। बाबा धार्मिक चरित्रात्मक ग्रंथ मुश्किल से पढने लगे। धिरेधिरे पढने की प्रवृत्ती उनमें विकसीत हो गयी। धर्माचरण और सदाचरण सें उनकी विवेकबुध्दी में विलक्षण परिवर्तन हो गया और मद्यपान एवं मासांहार का बाबाने त्याग कर दिया। इस शुध्द आचरण के कारण उनके व्यवहारमें भी प्रसन्नता आने लगी।

उस समय उनके उपर आनेवाले संकटों का कुशलतापुर्वक बाबा सामना करते रहे। और उसके उपर उपाययोजना करते रहे। इस व्यावहारिक, सामाजिक, मानसिक तणाव में ही उन्हे अंतरंग योगजागृती का आभास हुआ। जीस समाज में अज्ञान, अंधश्रध्दा इसके अलावा बाकी बातों का ज्ञान नही था, उस समाज में रहकर योगप्रक्रिया का वहन करना अर्थात बहती गंगा के प्रवाह में विरुध्द दिशा में तैरने जैसी बात थी। उस समय उनमें योग के लक्षण स्पष्ट रुप से दिखाई देने लगे।

पंरतु इस आधुनिक युग में अज्ञान, अंधश्रध्दा, में डुबे हुए लोगोंमें बाबा को होनेवाले योग-अंग-दिव्य प्रक्रिया की जराभी जानकारी नही थी। इसलिए समाज के लोगों को बाबा के उपर भूत-प्रेत, भानामती, केगामती का असर हुआ है,ऐसा लगने लगा।

समाजमें भी ऐसाही उनका प्रचार होने लगा। परंतु मास्टरजी जैसे लोगों को इस बात की शाश्वती हो गई थी की, यह भुत-प्रेत का असर न होकर उनमें महात्मा के(योग के) लक्षण दिखाई दे रहे है।

अंत मे कुछ दिनों के बाद उनमें स्थित शक्ति के दृढ लक्षण सिध्द हो गये। आज सिध्दयोगी परमहंस सद्‌गुरु श्री फुलाजीबाबा इनकी आधुनिक विश्व में (संत महात्मा) योगी पुरुष के रुपमें पहचान हो गयी है। साक्षात भगवानस्वरुप ईश्वर के अंश के रुपमें वे सत्यधर्म का प्रबोधन कर रहे है। प्रत्येक मनुष्य को बाबा सत्य ध्र्माचरण का उपदेश दे रहे है।

‘ अध्यात्मिक अमृतधारा ’

अनादिकाल से मनुष्य अंधःकार तथा अज्ञान के चक्र में घुमते हुए आ रहा है। जब तक अंधःकार का नाश नही हो जाता, तब तक मनुष्य में आत्मज्ञान की जागृती नही होती, और आत्मशांती प्राप्त होना और भी कठिण है।

ईश्वर ने अपनी सृष्टीरचना में ब्रह्मांड को एक प्रतिरुप के रुपमें(देह का आकार) मानव शरीर का निर्माण किया है। ईस (शरीरमें)ब्रह्मज्ञान को प्रवेश दिया है। सदगुरु की कृपा सें मानव शरीर में स्थित आत्मरुपी कुंडलिनी अथवा जीव जागृत होकर साधक में स्थित, अज्ञान, अंधःकार प्रवृत्ती नष्ट होकर एकही क्षण में उस साधक को परमार्थ की ओर जाने का मार्ग खुला हो जाता है।

‘ शिवसंहिता ’

इस महान ग्रंथ में वेद-पुराण आदि शास्त्रोमें तीर्थयात्रा को दि गयी मान्यता के बारेमें यह वर्णन किया गया है की, तीर्थयात्रा करनेसें सभी पापो का नाश हो कर मुक्ति मिल जाती है। अपना अभिष्टचिंतन सिध्द हो जाता है। इसलिए धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्त हो जाते है।ऐसा विवेचन इस ग्रंथ में दिखाई देता है।

इसलिए ग्रंथ पुराणो का ज्ञान उचित समझकर तीर्थयात्राँए करने का मनोदय सभी लोग व्यक्त करते है और सभी भ्रम मे बंधे रहते है। परंतु इस ब्रह्मांड के सभी तीर्थो के स्थान हमारे ब्रह्मरुपी मंदिर में है। इस बात की ओर सभी ने अनदेखा किया है।

‘ शक्तिपातयोगरहस्य ’

शक्तिपातयोगरहस्य इस ग्रंथ के प्रकरण ३ पान क्रं.४० पर पिंडब्रह्मांड के बारेमें निम्नप्रकारसे वर्णन किया गया है।

सभी तीर्थ हमारे देहमें भरे हुए है। इस शरीर में सप्तव्दिप, सुमेरु पर्वत, समस्त नदियों का समूह, सभी पर्वत, क्षेत्र, क्षेत्रपालक,ऋषी-मुनी, ग्रह-उपग्रह, नक्षत्र का समुह , सभी पर्वत-तीर्थ आदि भरे हूए है। सृष्टि को चमकाने वाला सूर्य और चंद्र हमारे शरीरमें ही कार्य कर रहे है।

आकाश, वायू, जल, अग्नी और पृथ्वी इस त्रिभुवन के चराचर प्राणी इस शरीर के सुमेरु त्रिवेणी पर्वत का आश्रय लेकर उनका व्यवहार निरंतर कर रहे है।

ब्रह्मांड के समस्त जीवन और वस्तुसमुदाय इस पिंडरुपी देह में होने का अनुभव लेकर दुसरों को बताने वाला साधक निःसंदेह सच्चा ज्ञानी है। ऐसे साधक को योगी कहा जाता है। इस शरीर में गंगा,यमुना,सरस्वती आदि बहत्तर हजार नदीयाँ नाडी के रुपमें बह रही है। गंगा,यमुना और सरस्वती इन तीन मुख्य संगम की नदीयों में(सुशुष्ना) के रुपमें स्नान करने से मोक्ष प्राप्त हो जाता है।

इस भृकुटिको ही संगम कहा जाता है। इस आत्मज्ञान मे स्नान करने से सभी पाप नष्ट हो जाते है। संत महात्मा स्वयंम की भृकुटिमें आत्मा की यात्रा करते है। इस संगम को ही शिवतिर्थ कहते है। योगशिखउपनिषद(ग्रंथ) में सुशुष्ना नाडी का महातिर्थ के रुप मे वर्णन किया गया है। गुरुकृपा से मानव की कुंडलिनी शक्ति जागृत होने से साधक का मानसिक स्नान होकर (षढविकाररहित) सर्वसिध्दी प्राप्त हो जाती है और वो जीवनमुक्त हो जाता है। पंरतु तीर्थयात्रा को जाकर गंगा, गोदावरी में स्नान करने से अपने पापों का नाश नही होता है। इससे शरीर पे चढे मल का नाश अवश्य हो जाता है। अंतरंग के उपर चढे हुए मल का जैसे घृणा, व्देष, मोह, कपट, अहंकार, गर्व, अभिमान आदि मल को किस साबुण से धोयें?

किस गंगा, यमुना के जलसे धोयें? अभी तो अपनी आँखे खोलीए। सावधान हो जाईये। उपरोक्त सभी विकार नष्ट करने का एकमात्र मार्ग है- ध्यानमार्ग। ध्यान व्दारा सभी विकारों को धोया जा सकता है। उसे शुध्द कर सकते है। इसीलिए अंतर्मुख होकर ध्यान किजीए।

सभी षड्विकारों को ध्यान इस माध्यम व्दारा शुध्द कर सकते है। ज्ञानरुप प्रकाश से अपने अंतरात्मा के शत्रु-मित्र,आशा-निराशा,गर्व -अभिमान,कपट आदि घटक नाश हो जाते है, और ध्यान के दिव्य सामर्थ्य में हम मंत्रमुग्ध हो जाते हैं।

यह शरीरदेह शुध्द, पवित्र है। इस नाशवंत देह में दिव्य अमृत की खोंज करके संत-महात्मा कृतज्ञ हुये है। आज तक आत्मज्ञान का खुला मार्गदर्शन तथा स्वरुप की पहचान संत सदगुरु के न मिलने से हमे न हो सकी।

ईश्वर हमारे अंतरमे आत्मरुप में बसा है। ईस सत्यज्ञान की पहचान हमें नही हो सकी।
इसलिये संत तुकारामजी कहते है

तुझा देव तुझ्यापाशी ।
परी जागा भुललाशी ।।

– संत तुकाराम

इसका भावार्थ यह है – मेरा ईश्वर तुझमें बसा है । पंरतू उस आत्मराजा की तुझे पहचान नही है। उसकी पहचान न होने के कारण तु बाह्य जगत में उसकी खोंज इधर-उधर भटक कर कर रहा है। इसलिये संत तुकाराम महाराज कहते है, तु ईश्वर को गलत जगह पर खोंज रहा है।

अरे पगले, बाह्यरुपमें तुझे पत्थर के अलावा क्या मिलेगा? अपना अमुल्य जीवन व्यर्थ मत बिता। तेरा ईश्वर तेरे अंतंर में ही बसा है। ईस ईश्वर की पहचान कराने वाले गुरु के पास जा, और वही तुझे सच्चे गुरु की पहचान करा देगा।

आत्मा हा विठ्ठल । काया ही पंढरी ।।

इन पंक्तियों मे संत तुकाराम कहते है- भगवान को खोजनें के लिए जंगल,पर्वत और गुंफाओं में जाने की आवश्यकता नही है।

इस शरीररुपी पंढरी में आत्मारुपी विठ्ठल की खोंज करना है। और उसकी खोंज करने का एकमात्र मार्ग है - **ध्यान।**

पानी से नमक तयार होता है, और वही नमक पानी में पिघल जाता है। उसी प्रकार हम शून्स से आकार में आये है, और वापस आकार से निराकार में अर्थात शून्य में विलीन हो जाता है।

भृकुटिमहाव्दार में चित्त को ध्यान के व्दारा स्थिर करनेसे आत्मदर्शन होता है। महात्मा, योगी पुरुष देहरुपी मंदिर में आत्मदर्शन की निरंतर यात्रा करते है और समाधि सुख में दिव्य अनुभव ग्रहण करते है।

विश्व के कल्याण के लिए संतों ने स्वयं अपने देह को कष्ट देकर स्वानुभाव से दिव्य ज्ञान की प्राप्ती करके जनसमाज को सत्य का प्रति पादन कराया है। और वही सच्चे महात्मा है। इस मानव देहमें आत्मशक्ति होने के कारण मनुष्य सबकुछ कर सकता है। सत्संग तथा शुध्द विवेकबुध्दि के अभाव में ज्ञान तथा अज्ञान इसकी पहचान न होने के कारण इस संसारिक भवसागर में बडे षड्विकारों पर विजय प्राप्त करना असंभव हो जाता है।

सदगुरु की कृपा व्दारा मनुष्य आत्म के उपर चढे हूए जंग को जब तक नष्ट करता है, तब तक उसे इस बात की अनुभूती नही होती है की, हम ही हमारे मित्र है, और हम ही हमारे शत्रु। हमे सज्जन,दुर्जन,गर्व-अभिमान, अहंकार इन सारी दृष्ट प्रवृत्तींयो का आत्मा के व्दारा पहचान होती है। इस देहरुपी परिवार में(जीव) एक चोर है और इच्छा यह पत्नी है। गर्व,अभिमान,कपट यहाँ तीनों उसके बेटे है। आशा, वासना, कल्पना यह तीनों उसकी बेटीयाँ है।

उपरोक्त बातों की हमें उचित प्रकार से कल्पना आयेगी, तब हमे पाप-पुण्य, भला-बुरा,सत्य-असत्य, इन सारी बातों की पहचान होकर एक-एक कदम आगे बढना हमारे लिए आसान हो जाएगा।

पंचमहाभुतों से निर्माण हूवा यह देह, इस देह में परमेश्वर पंचतत्व शक्तीरुपमें विलीन है। इस सगुण शरीर में निर्गुण पंचतत्व रुपमें वास करता है। दया, क्षमा, शांति और व्देष, घृणा, लोभ यह सभी देह में ही होकर हमे दिखाई नही देते है। उसी प्रकार ईश्वर भी इस देह में बसा है। कोटिसुर्य प्रकाश के तेजों के साथ वह अपने शरीर में बसा है। उसे केवल ज्ञानदृष्टी से ही देखा जा सकता है। मान लो निंद बहुत आनंददायी हूयी है। पंरतु वह किस प्रकार की हुयी है, इसे दिखाया जा नही सकता। साधारण मनुष्य का सत्वपुरुष होना इसका महत्वपुर्ण कारण है उसकी आत्मजागृती अथवा आत्मदृष्टी जागृत होना। अध्यात्मिक दृष्टिसे विचार करने से यह निदर्शन में आता है की, श्रीकृष्ण यह निराकार स्वरुप है।

वे स्त्री अथवा पुरुष नही थे। उनका विवाह भी नही हुवा था। वे ब्रह्मचारी थे यह बोध होता है। अष्टपत्नियाँ इसका अर्थ है अष्टसिध्दी। श्रीकृष्ण ने बहात्तर हजार नारीयों का उपभोग लिया ऐसा कीा जाता है। पंरतू इसका उचित अर्थ है नारी सुख अर्थात भगवान श्रीकृष्ण बहत्तर हजार नाडीव्दारा ध्यान स्थित स्वरुप में ध्यानमग्न होकर आत्मस्वरुप में मग्न रहते है। उनका रोम-रोम पुलकित हो जाता था।इस सुख को ही नाडी सुख कहा जाता है।(नारी सुख अथवा स्त्री सुख कहना अनुचित होगा) अपने देहमें विराजमान आत्मज्योती को ही श्रीकृष्ण की संज्ञा दि गयी है। ध्यानव्दारा अंतरंग में आत्मशक्ती का विकास होता है।

पुराण में ब्रह्म, विष्णु, महेश इनका उल्लेख किया गया है ब्रह्म का अर्थ है सृष्टीकर्ता, विष्णू का अर्थ है रक्षणकर्ता और शंकर का अर्थ है संहारकर्ता। इन तिनों देवों की मूर्ति मंदीर में स्थापीत करने से उन्हे जडत्व प्राप्त हो गया है। फिर चेतन अवस्था में होनेवाले सृष्टि का रक्षणकार्य और सृष्टि का उत्पत्ती कार्य, सृष्टि का रक्षणकार्य और सृष्टि का संहार करनेवाला कौन है? फिर सजीव समान विचार किया जायेगा। सत्य अथवा सत्यतासे चलना यह विष्णुमय कार्य में आयेगा। अहंकारी आचरण करना तथा तम् प्रवृत्ती से आचरण

करना यह शंकरमय कार्य समझा जायेगा। माया,मोह,उत्पत्ती(वीर्य) यह निर्माण कार्य अर्थात ब्रह्मकार्य माना जायेगा।

रज,तम,सत्व यह तीनों सत्वगुण है। और यह तीनों सत्व गुण प्रत्येक मनुष्य में होते है। रज, तम, सत्व इन गुणों को ही ब्रह्म,विष्णू,महेश कहा जाता है। लक्ष्मी, सरस्वती और पार्वती इन्हे दया, क्षमा, शांति कहा जाता है। और यह तीनो गुण प्रत्येक मनुष्य में होते है। इसिलीए प्रत्येक मनुष्य ने यदि सत्कर्म और सत्मार्ग से चलकर अपना जीवन व्यतित किया तो उनका नारायण बनना मुश्किल नही है। और यह कहना अतिश्योक्ती भी नही होगी। नर का अर्थ है पुरुष देह। ध्यान का अर्थ है आत्मा। भूतदया याने प्राणी समूदाय पर दया करना। यही सच्चा धर्म है। यही सत्य है। और सत्य यही ईश्वरभक्ती है। नवविधा भक्ति का अर्थ है नव इंद्रिय को एकत्र करना। नव इंद्रियो को अपने काबु मे रखना। उनके उपर अंकुश लगाना।

उन्हे अपने आधिन रखकर नवइंद्रियों पर नियंत्रण रखते हुए उसका उचित उपयोग करना। और यह करनेवाला सिध्द पुरुष कहलाता है। इन इंद्रियो के आधिन अगर हम हुये तो हमे परमार्थ ज्ञान प्राप्त नही होगा। हमारे अंतरंग मे वास करने वाला आत्मा अनेक विषय समझता है । परंतु उस आत्मा को हम पहचान नही सकते। जैसे गन्ने मे शक्कर अथवा गुड दो पदार्थ होते है उसी प्रकार दूध में श्रेष्ठ घी नाम का पदार्थ होता है, उसी प्रकार हमारे देह में भी आत्मा नाम कि दिव्य शक्ती छुपी है। आत्मा सुक्ष्म है, पंरतु उसकी शक्ति अद्भूत और अनंत है। हम इंद्रिय सुख के दास बनकर मोह माया में फंसकर सच्चे आत्मशक्ति की पहचान करनेसे वंचित रहे है। आत्मशक्ति की प्रगती के लिए नियमीत साधना की आवश्यकता होती है। जैसे की हम दूध को कितना भी घूमाते हूए बैठे फिर भी दूध से घी निकालना असंभव होगा। दूध से घी निकालने के लिए प्रथम दूध को भरपूर गरम करना पडता है। दूध ठंडा होने के पश्चात उसमें छाँछ डालकर उसपर प्रक्रिया करनी पडती है। उस प्रक्रिया के पश्चात उसमेंसे माखन निकाला जाता है। माखन से ही घी तयार होता है। इससे हमें यह समझ में आता है की ध्यान साधना की प्रक्रिया भी इसी प्रकार की होती है। उपरोक्त प्रकार से भरपूर कष्ट लेने से ध्यानशक्ति की एकाग्रता का हमें अनुभव आ सकता है। जैसे मृगानाभी में कस्तुरी होती है पंरतु मृग को उसकी पहचान नही होती है। मृग के दौडनेसे उसके नाभी में कस्तुरी की सुगंध और भी बढ जाता है और वह उसके नाक मे घुमने लगता है। उय सुंगध की खोज में वह और भी इधर-उधर घुमने लगता है। पंरतु इस सुंगध की खोंज नही हो सकती है। इस पगले हिरण को क्या पता? की उसके नाभी में ही कस्तुरी का सुगंध छुपा है। इस हिरण जैसी हि अवस्था मनुष्य कि हो गयी है। यहा आत्माराम हमारे देह में ही छुपा है। पंरतु हम पागल की तरह उसकी खोज करने के लिए अंतरंग को छोडकर बाह्यरंग में भटक रहे है। आत्माराम परमेश्वर हमारे देह में शक्तिस्वरुप, ज्योतिस्वरुप और ध्वनीस्वरुप में विराजमान है। उसे बाहर खोजने की आवश्यकता नही है। अंतर्मुख होकर ध्यान करने से उसके शब्द सुनाई देते है।

उसी प्रकार यह वायुरुपमें भी संपूर्ण ब्रह्मांड में छाया है। माता की गर्भाशय में हम नौ माह नौ दिन कैसे पलते रहे? वहाँ हमारा रक्षण किसने किया? आज तक बीज मंत्र को श्वास-उच्छवास व्दारा चलाने वाला कौन है? फिर यहाँ आत्माराम के सिवा कौन हो सकता है। अर्थात यही परमेश्वर है।

आज प्रत्येक मनुष्य को शुध्द विचार करने की आवश्यकता है। हमें जब तक आत्मस्वरुप की पहचान नही होती तब तक हमारा भजन पुजन करना व्यर्थ है। उसके व्दारा आत्मस्वरुप की पहचान होना कठिण है। आत्मदर्शन के सिवा परमेश्वर के बारेमें ज्ञान प्राप्त नही हो सकता। यह आत्मा राम हमे वश हो जाना चाहिये। और अगर यह वश हो जाता है तो हमारा उध्दार निश्चित है।

रामायण इसी देह में छुपा है। अर्थात वह कैसे? देखिये, यह शरीर देह अयोध्या है, आत्मा यही राम है। शांति यही सिता है। आनंद यह बिभीषण है। श्वास यही हनुमान है और क्रोध रावण की भूमिका निभाता है। (इस देह का रामायण)

हम अपने जीवन में ग्रंथ अभ्यास व्दारा पंडित हो सकते है। पंरतु हमें आत्मज्ञान नही हो सकता। दुनिया में बहुत सारे वक्ता है, इस अध्यात्मिक विषय पर पानी पिने जैसा निरंतर बोलते रहते है। पंरतु इस

आध्यात्मिक तत्वस्वरुप को बनाये रखने का शुध्द आचरण उनके पास नही होता है। अध्यात्मिक शुध्द तत्व का आचरण करने वाला मनुष्य लाखों मे एक होता है।

आज आध्यात्मिक प्रगति के लिए शुध्द चैतन्य प्रेरणा शक्ति की आवश्यकता है। दिव्य शक्ती की जागृती प्राप्त महापुरुषीय, आत्मशक्तीय प्रेरणा व्दारा दुसरे प्रेरणाशक्ति को जो चेतना देते है वही महापुरुष, सद्‌गुरु कहलाते है। जिस व्यक्ति को इस प्रकार की आत्मचेतना अथवा प्रेरणाशक्ति मिलती है वह सच्चा शिष्य कहलाता है। उसका उल्लेख स्वामी विवेकानंद ने अपने ग्रंथ में किया है। प्रत्येक मनुष्य को दिव्य स्वरुप प्राप्त सद्‌गुरु को शरण आकर उसमें आश्रय लेने की आवश्यकता होती है। प्रथम प्रज्वलीत दिव्य शक्ति के व्दारा दुसरे दिपो को प्रज्वलीत किया जाता है, अर्थात एक दिये से दुसरा दिया जलाया जा सकता है। प्रथम स्वयंम् प्रज्वलित दिप यही सद्‌गुरुरुप है। और गुरुरुप दिव्य व्दारा प्रज्वलित किये जानेवाले दिप यही शिष्य होते है।

सद्‌गुरु की सेवा कैसे करनी चाहिये? इस संबंध में संत ज्ञानेश्वर महाराज इन्होने अपने ज्ञानेश्वरी के अध्याय १५ में बहुत अच्छा विवेचन किया है। श्री सद्‌गुरु सेवा करनेवाले साधक अपने ह्रदय को स्वच्छ निक्लेश करके उस -हदय कमल में सद्‌गुरुचरण की स्थापना करके मन के भेद, विभेद स्वच्छ करके ऐक्य भावना की मुठ्ठी में सभी इंद्रियों को फुले हुए कमल को सद्‌गुरु के चरण में समर्पित करना अर्थात सभी इंद्रिय को ऐक्य करके अनन्य भाव से चरणों मे अर्पण करना है। श्री सद्‌गुरु को अनन्य भाव से स्वच्छ सुगंध के तिलक लगाकर प्रेमरुपी सोने के पैंजण श्री गुरु चरणों को निष्ठारुपी सुंगध के तिलक लगाकर प्रेमरुपी सोने के पैंजण श्री सद्‌गुरु के चरणों मे अर्पण करके दृढ प्रेम से भरे हूए अभिविचारी प्रेम भावनासे दो उत्तम अंगुठीयाँ सद्‌गुरु के अंगुठे में अर्पण करना चाहिए। आनंदरुप सुंगध से परिपूर्ण आष्ट सात्विक भाव प्रकाशीत, आष्ट दलात्मक कमल को श्री सद्‌गुरु के चरणों में अर्पण करना चाहिए। श्री सद्‌गुरु पुजा करते समय अहंकाररुपी धुप जलाकर, सद्‌गुरुचरणों की आरती करके अंत मे मै कुछ भी नही हूँ, सब कुछ सद्‌गुरु है, यह कहकर अव्दैतरुपी बुध्दि को दिया जलाकर सतगुरु चरणो की आरती करके श्री सतगुरु को प्रेम से संपुर्ण सतगुरु चरण में एक होकर मेरा शरीर और प्राणों की पादूका करके सतगुरुचरण में अर्पण करके उसेही भाग्य और मोक्ष समझना चाहिए।

मोक्ष मार्ग दिखानेवाला अच्छा सद्‌गुरु होता है। महात्मा तथा सत्पुरुष अत्यंत कष्टमय मार्ग से अध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करते है। शिष्य के उपर शक्तिपात करके उन्हे कृतार्थ करते है। सद्‌गुरु कृपा व्दारा कुंडलिनी शक्ति जागृत होती है और ध्यानव्दारा आत्मज्ञान की हमे प्राप्ती होती है। भृकुटि में मन को स्थिर करके ज्ञानरुपी स्नान करने से अंतःकरण शुध्द होकर मै कौन हुँ । मेरा स्वरुप क्या है। मै कहाँ से आया हुँ। मुझे कहाँ जाना है, मुझ में का मै,न होकर कोई दुसरा और है और वही मुझे चलाता है इन सारे प्रश्नो की प्रचिती आने लगती है।

जीव अर्थात (अज्ञान) । शीव का अर्थ है आत्मा। जीव के उपर का अज्ञान, अंधःकार का आवरण दूर करने के पश्चात परमेश्वर कौन है उसका ज्ञान होने लगता है।

हम कभी न कभी अपने नयनों से स्व स्वरुप को देख सकते है । आप आपका आत्मा प्रसन्न कर लिजीये। आपका स्वरुप आपको दिखाई देगा। इस चराचर विश्व में मै एक हूँ यह अगर हमें ज्ञान होता है, तो मान लिजीए हमे ईश्वर की पहचान हो गयी। हमारे जन्म का मूल कारण क्या है। इसकी खोज करके वापस उसी जगह पर जाकर स्व स्वरुप शून्यतम जन्म में जाकर शून्यतम में ही विलीन हो जाना अर्थात जन्म की खोज करना यही सच्चा जन्म का उद्देश है । इस चराचर की संपूर्ण जीवसृष्टी इसके उपर ही निर्भर है।

प्रत्यक्ष मूर्ति, सजीव सद्‌गुरु अगर है तो उसकी मुर्ति नयनों के समक्ष खडी हो जाती है ।
जैसे एकलव्य उनके सद्‌गुरु की प्रत्यक्ष मूर्ति सामने रखकर सद्‌गुरुमुर्ति मंत्र का उत्तम उदाहरण सामने रखकर अपनी साधनामें यशस्वी हूए थे उस प्रकार सगुण रुपी सद्‌गुरु में निर्गुण परमेश्वर सदगुरु रुपसे भरा हूआ है। विश्वास रखकर ध्यान किजीये । ईश्वर प्राप्ति निश्चित होगी। ध्यान मार्ग यह सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। भक्ति के लिए सरल और सुलभ मार्ग यह ध्यान मार्ग है। अंतर्मुख होकर ध्यान किजीये ।

अमेरिका जैसे देशों में भी आज दैवी ज्ञान की प्राप्ति करने के प्रयत्न चल रहे है। दैवी ज्ञान की प्राप्ति का उपयोग अपने राष्ट्र की उन्नति के लिये हो इस दिशा में अमेरिका प्रयत्न कर रहा है। परंतु हमारे भारतवासी अध्यात्मिक ज्ञान से दूर जाकर पुजापाठ कर रहे है। रामायण के उस कालमे द्रोणागीरी जैसे बडे पर्वत हनुमान जीने आत्मा शक्ती व्दारा उठाकर ले गये थे यह कथा हमने सुनी है। उन्होने किये अद्‌भूत कार्य की खोज.न.करके उस हनुमान पर हलदी कुकूंम डालकर हम उसकी पुजा में व्यर्थ जीवन बिता रहे है। लेकिन हम अपने स्व स्वरुपको भुल गये है।

इसी लिये हमे अपने आत्म के चीन्तंनसे पंचतत्व पर काबू कर सकते है। और साधक को दिव्य दृष्टी प्राप्त होकर चंद्र मंण्डल और आकाश गंगा का भी ज्ञात होता है। हमे दुर दृष्टी से आकाश वाणी वह पर काया प्रवेश गमण का भी अनूभुती आती है।

इसे सतूगुरु के दिव्य ग्यान का आत्मा साक्षात्कार कहते है। यही साक्षात्कार हनूमान जीने किया था,

भारतीय शास्त्रीय सगीतंमे दिप राग सर्व श्रेष्ठ मान ते है। अध्यात्मींक ग्यान मे सगीतं और राग राग नी नही है क्या। यह भी महात्मो की सस्कृती है, महात्मा के सत् सगत् से अन्दंर का पट खुलता है। चैतन्य शक्ती जागृत हो कर इस

नाद की अनुभूती आती है। उसे दिप राग कहते नही क्या क्यो, की अज्ञान अधःकार मे फँसा है प्राणी अर्थात (जिव) इसीके लिये हमे सत् गुरु कृपे कि आवश्यकता है। इसी लिये वैज्ञानिकोने खोज करके विद्युत शक्तीका अविष्कार हुआ है। महाभारत कें कुरुक्षेत्र मे होनेवाले कौरव-पांडव के युध्द का प्रत्यक्ष वर्णन संजय ने धृतराष्ट्र के

पास बैठकर किया था। यह वर्णन उन्होने कैस किया, इसकी अगर हम खोज करते है तो यह उत्तर हमारे समक्ष आता है की संजय को दिव्यशक्ति प्राप्त थी। इस दिव्य शक्ति का आधार लेकर वे युध्द का प्रत्यक्ष वर्णन करते थे। इसी का वैज्ञानिक आधार लेकर दूरदरर्शन की खोज हूयी। यह एक वैज्ञानिक सत्य है। आज तक हम एक भी ग्रंथ की आत्माखोज करने का प्रयत्न सही रास्तेसे नही किया है।

इस परमोच्च ज्ञान क्रिया में बहुत बडी दिव्य शक्ती भरी हूयी है।इसका विश्लेषण करना असंभव है। समाधिस्त होकर हजारो किलोमीटर दूर बसे अपने प्रिय`जनोंसे संभाषण किया जा सकता है। वहाँ निंद में सोये व्यक्ति को यहाँसे उठाया जा सकता है। अमरिका, इंग्लंड आदि देशों के अनुसंधानकर्ताओं ने ध्यानशक्ति पर बहूत जादा अध्ययन करके अनेक अविष्कार किये है। आज हम घर बैठकर टेलिफोन, मोबाईल के व्दारा देश-विदेश में बात कर सकते है। यह उसी का एक उदाहरण है। प्राचीन काल में हमारे ऋषीमुनीयों को अध्यात्मिक शक्ति के व्दारा ही एक-दुसरे से संभाषण करना संभव होता था। आज हम इस अध्यात्मिक शक्ति से दूर भाग रहे है। हमे उसकी ओर ध्यान देने के लिए भी फुरसत नही है।

इस दिव्य शक्ति का उपयोग संत,महात्मा,मुनिओंने समाज उन्नती के लिये किया है। अध्यात्मिक प्रक्रिया व्दारा ही अद्‌भुत कार्य संपन्न हो सकते है । इस बात पर उनका विश्वास था। परंतु इस दिव्य शक्ती का कार्य मानव बुध्दि के परे है ऐसा कुछ लोगो ने मानकर इसके उपर टिका टिप्पणी करना शुरु कर दिया। इस ज्ञान का हमे कोई फायदा नही हो सकता इस बात का गलत प्रचारभी करना उन्होने शुरु कर दिया। कुछ समय के पश्चात यह दिव्य शक्ति लुप्त होने लगी और लोगो का अध्यात्म शक्ति के उपर का भरोसा कम होने लगा।

ऋग्वेद, मंडल चौथाः

ऋग्देव मंडल चौथे में सूत्र १८ वें वामन देव का उल्लेख किया गया है। वामन देव अपनी माँ की कोक में थे तब उन्हे ब्रम्हज्ञान की जानकारी होने लगी थी। उन्होने पंचमहाभूतों को परमेश्वर माना था। मानव मे संपूर्ण विश्व ज्ञान भरा हूवा है, इसलिये पंचतत्व के संगम से यह देह तैयार हूवा है, इस बात पर उनका पुरा विश्वास था। पंचतत्व के आधार से ही इस सृष्टि के कार्य चल रहे है। पंचतत्व ही मनुष्य के जीवन का आधार है। इस पंचतत्व से एक भी तत्व अगर कम हो जाता है तो मनुष्य को जीवन व्यक्तीत करना असंभव हो जाता है। विश्व का विनाश करने वाले यही पंचमहाभूत अथवा पंचतत्व है।

विनाशकार्य

१) जलतत्व - अतिवृष्टी, अनावृष्टी विनाश

२) पृथ्वीतत्व - भूकंप से विनाश

३) वायूतत्व - तुफान से विनाश

४) अग्नितत्व - अग्नि तथा ज्वालामुखी से विनाश

५) आकाशतत्व- बिजली गिरने से विनाश

श्रीकृष्ण भगवत गीता से -

भगवत गिता में भगवान श्रीकृष्ण कहते है, मै सर्वव्यापी हूँ। मेरे आज्ञा के शिवा पत्ता भी नही हिलता है। यह उल्लेख गिता में किया गया है।

हममें छायारुपी रहनेवाला कौन है। पंचमहाभूत ही है ना। इस पृथ्वी तलाव पर कही पर भी हम जाते है तो वायुजल,अग्नि,आकाश और पृथ्वी तत्व मिलते है। इन तत्वों के अभाव में हमारा जीवन व्यतित करना भी असंभव है। प्रत्येक मनुष्य में श्वास रुप में प्राण है। अर्थात प्राण को हिलानेवाला वायू ही है ना। इस प्रकार ज्ञान को समझकर ईश्वर का स्वरुप पहचानना चाहिए।

गुरुचरणों की पुजा -

सद्‌गुरु चरणों की पूजा सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। कुलार्णव तंत्र इस ग्रंथ के व्दादश उल्लास में सद्‌गुरु भक्ति के बारेमें परमेश्वर ने पार्वती को ही इस प्रकार का उपदेश किया है।

मैने जो सद्‌गुरुभक्ति के विषय रस के संबंध में विवेचन किया है, यह साधक ने एक बार सुना हो तब भी उस साधक के अंतःकरण में भक्ति प्रेम जागृत हो सकता है।परमेश्वर (महेश) कहते है। कोटि महायज्ञोंसे श्रेष्ठ, कोटि महादान से श्रेष्ठ, कोटि महाव्रत से श्रेष्ठ श्री सद्‌गुरु के चरण स्मरण पुजा है।

उसी प्रकार कोटी महापूजा से श्रेष्ठ, कोटी पुजापुरस्कार से श्रेष्ठ सद्‌गुरुचरण पूजा है। सद्‌गुरु का स्मरण करने से कोई भी कठीन व्याधि क्यों न हो, महाभयंकर रोग, भयदोष जैसे संकटो से सद्‌गुरु रक्षण करता है। हररोज, हरपल सद्‌गुरुचरणों का स्मरण करने वाले साधक को सभी वेद शास्त्र अध्ययन का पुण्य प्राप्त होता है। सभी साधक के फल प्राप्त हो जाते है।

श्री सद्‌गुरुपादूका के स्मरण सभ्‌ी पापोंसे मुक्ति, चतुरर्विध पुरुषार्थ को प्राप्त कराते है। श्री सद्‌गुरु के चरण कमल जीस दिशा में रहते है उस दिशा में श्रध्दा भक्ति से नमस्कार करनेसे भी हमे मनोमन शंति प्राप्त हो जाती है और इससे श्रेष्ठ मंत्र और दुसरा नही हो सकता। सद्‌गुरु से श्रेष्ठ ईश्वर नही है। सद्‌गुरुमूर्ति के ध्यान से दुसरा ध्यान श्रेष्ठ नही है। इसलिये परमेश्वर महेश ने पार्वतीदेवी को सद्‌गुरुभक्ति का वर्णन करके कहा है, इस जगत में सद्‌गुरुभक्ति से दुसरी श्रेष्ठ और शाश्वत भक्ति नही है। इसके लिये भक्ति युक्त अंतःकरण से सिध्दीमोक्ष से सद्‌गुरु को ही शरण जाना पडेगा।

श्री गुरुकृपा -

श्री सदगुरु व्दारा अनुग्रह व सदगुरु कृपानुग्रहको ही शक्तिपात कहा जाता है। अध्यात्मिक प्रगती के लिए, ज्ञानप्राप्ती के लिए, कैवल्य ज्ञान प्राप्ति के लिए श्ष्यि के उपर सद्‌गुरु शक्तिपात करता है। प्रत्येक व्यक्ति में अध्यात्मिक शक्ति सूप्त अवस्था में होती है। सद्‌गुरुकृपा व्दारा शक्ति जागृत होकर शिष्य को शक्तिरुपमें अनुभव होने लगता है।

कुंडलिनी शक्ति जागृत होने से विभिन्न प्रकार के लक्षण शरीर में दिखाई देने लगते है। जैसे नृत्य करना, गायन करना, जमीन पर सो जाना, जोर से चिल्लाना, प्रफुल्लीत होना, दीर्घ श्वास लेना, चित्र-विचीत्र शरीर पर आघात करना, शरीर को गोल घुमाना, रोना, हसना, निद्रीत होना, मुर्च्छित होकर जमीन पर गिर जाना, शरीर को पसीना आना, रोमांचीत होना, शरीर हलकासा लगना, हिचकी आना, ठंड लगना, हात पैंरो को खिंचने जैसा अनुभव होना आदि लक्षण दिखाई देते है। मन आनंदित होकर अनेक प्रकार की क्रियाओं की अनुभूती होने लगती है। इससे पूर्व संस्कार, विकार नष्ट हो जाते है। और आत्म प्रचिती का अनुभव होने लगता है।

सदगुरु कृपा प्राप्त साधक स्त्री-पुरुष, बालक, बालिका, नव यवुक, वृध्द, रोगी, निरोगी, पापी, पुण्यवान, मुर्ख, महामुर्ख, विध्वंसक, आस्तिक, नास्तिक कोई भी क्यों ना हो क्रियाओं के लक्षण सभी में धिरे धिरे विकसित होने लगते है।

केवल मनुष्य प्राणी को ही ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार है। जलती ज्वाला में चंदन की लकडी डालीये अथवा और कोई लकडी डालीये, वह अग्नीज्वाला में जलकर भस्म हो जाती है। अलग से डाले हुए लकडी का स्वतंत्र अस्तित्व नही दिखाई देता। इस प्रकार से सिध्द महायोग के व्दारा उत्पन्न अंतरअग्नि अपने सभी पापों का नाश करके साधक को ब्रह्मरुप में विलीन करने का मार्ग खुला कर देती है।

श्री परमहंस फुलाजी बाबा का संदेश-

आज के आधुनिक युग में वैज्ञानिक तंत्रज्ञान के क्षेत्र में विज्ञान ने बहुत प्रगति की है। पंरतु मनुष्य अध्यात्मिक अंतरंग के आत्मज्ञान में बहुत पिछे रहा है। उसका मुख्य कारण है अज्ञान। अंधश्रध्दा में फंसकर एक ही जगहपर बैठे रहना।

आदि-अनादि काल से भारतिय संस्कृती का जतन करने का महान कार्य अपने देश के ऋषी-मुनी, साधु-संत, ज्ञानी पंडित, तत्ववेत्ता इन महापुरुषोंने किया है। इन्होने अपने देह को कष्ट देकर अंतर्ज्ञान और ब्रह्मज्ञान की खोंज की है। इस अज्ञान में सोये विश्व को जगाकर अध्यात्मिक और संत वाड्‌मय के व्दारा भारतिय संस्कृति को प्रत्येक मनुष्य जीव के पास पहूँचाने का महान कार्य उन्होने किया है।

मै भी इस भारतीय संस्कृती का उत्तरदायीत्व निभा रहा हूँ। पर आज का युवक प्राकृतिक वैभव के मोह जाल में फसकर यही सच्चा ग्यान है, यह समझकर भ्रमिष्ट हुवा है। इसलिये वह शुध्द आत्मज्ञान से वंचित हो रहा है। संपूर्ण युवा पिढी को मेरा संदेश है की, आप सभी ने स्वरुप की पहचान करके भारत की अध्यात्मिक संस्कृति क्या है? इसकी जानकारी प्राप्त करके अपना उत्तरदायित्व निभाना चाहिये। इसलिये इस किताब के आखरी पन्ने पर कुछ ग्रंथ तथा पुराणों के नाम दिये है। उसका अध्ययन अवश्य किजीये।

अनेक संत महात्माओं ने विश्व की उन्नती के लिए अध्यात्म अनुभूती के महान ग्रंथ लिखे है।

यह ज्ञान आज का न होकर अनादि काल से चलते आ रहा है। इस अध्यात्मिक ब्रह्मज्ञान को कुछ स्वार्थी महापुरुषोव्दारा गुप्त रखे जाने से इस अध्यात्म के बारेमें केवल रहस्य तैयार हो गया है।

अभी तो अपनी आँखे खोलीये। ध्यानमय जीवन व्यतीत किजीये। यह आपको अध्यात्मिक दर्शन करानेवाला है। ग्रंथ के रहस्यमय ज्ञान, अनुभव भारत की मुल संस्कृती की पहचान कराते है। और आप उसकी पहचान अवश्य करके लिजीये। इसके सत्यज्ञान और आत्मज्ञान का अभ्यास किजीये। और इस ज्ञान को दुसरों में

बाँटकर ज्ञानदान का महान कार्य किजीये।

श्री परमहंस फुलाजी बाबाने(विश्व पर) विश्व के संपूर्ण मानवजाति के कल्याण हेतू सत्य अथवा असत्य वास्तव के विचार विनिमय और ईश्वर ने निर्माण किये ब्रह्मांड के सद् विचारों के सद् तत्त्व के धर्मग्रंथ, उनका रहस्य आदि घटकों के बारेमे विचार करके इस सृष्टि नियम के अनुसार है और इससे ही मनुष्य देह की निर्मीती हूयी है यह विवेचन किया है। इस विश्वविधाता परमेश्वर ने इस मनुष्य देह को जन्म से अंत तक किन चिजों की आवश्यकता होती है उसकी पूर्तता करने के पश्चात ही उसे जन्म दिया है। परमेश्वर ने इस सृष्टि का निर्माण करने के पुर्व इस सृष्टि में आवश्यक पंचमहाभूत तत्त्व समाविष्ट करके सृष्टि की निर्मिती की है। और ऋतू परिवर्तन होने के लिए उसे कालचक्र के आधिन रखा है। अपने कार्य सुव्यवस्थित निंरतर चले इसलिए सृष्टि के नियम के अनुसार समवृष्टि ठंड के काल में समसर्दी,गर्मी,धूप से समउष्णतामान होना चाहिये इसकी व्यवस्थित रचना विश्वविधाता ने की है।

परमेश्वर ने निर्माण किये हूए सृष्टी सौंदर्य रचना के विरोध में जाकर आज का मनुष्य(विज्ञान) के जोरों पर सृष्टी के गर्भ से धातू निकालने का काम तेजी से कर रहा है। जैसे पत्थर, कोयला, सोना, चांदी, पितल, जर्मन, पेट्रोल आदि पृथ्वी के गर्भ से उपर निकाला जा रहा है। जिससे सृष्टि का समतोल बिघड रहा है। उसी प्रकार से समुद्र से हिरे,माणिक,मोती निकाल कर बाह्य सौंदर्य को बढाने के लिए मनुष्य रातदिन प्रयत्न कर रहा है। पंरतु इससे भी पृथ्वी का समतोल बिघड रहा है। इसका ध्यान उसे नही है। जीस जीस ऋतु में विशिष्ट वातावरण होना चाहिए वह वातावरण आज नही रहा है। देखिये, हम हमारे घर मे एखादी वस्तु रखते है और उसे भुल जाते है और वह चिज हमें कुछ दिनों तक नही मिलती है।

परमेश्वर की इस सृष्टि में तो बहुत सारी चिजे रखी है जो जमीन के गर्भ में दूर दूर तक फैली है। लेकिन मनुष्य उन्हे निकालने के लिये मशिन का आधार लेकर पुरी कोशिश कर रहा है। पृथ्वी का समतोल रखनेवाली चिजे निकालनेसे
वातावरण मे बहुत ज्यादा बदलाव आये है ऐसा मेरा मानना है। अपनी भलाई के लिये पृथ्वी के संतुलन और उसके परिणामों का विचार करने के लिये आज काई भी तैयार नही है।

इस सृष्टि के समान पेचमहाभूतों से निर्माण हूये शरीर का अभ्यास करने से हमें उससे अपने सृष्टि तत्व का ज्ञान प्राप्त हो सकता है। इस मनुष्य के शरीर की ऐसेही रहस्यमय निर्मिती की गयी है।

शरीर और उसके इंद्रिय, अलग-अलग अवयव शारीरिक नियमों के अनुसार ही अपने कार्य करते है। शरीर मे एखादे अवयव में खराबी आनेसे हम रोगी बन जाते है। शरीर के कार्य सुचारु रुप से नही चल पाते है।

पंचतत्व से बने शरीर में एक भी तत्व अगर कम हो जाये तो मनुष्य का अंत भी हो
सकता है। इस मनुष्य देह को व्यवस्थित रखने के लिये अगर रक्त की जरुरत पड जाती है तो तुरंत उसे उपलब्ध कराना पडता है। शरीर में पानी की मात्रा कम होने से ग्लुकोज चढाया जाता है। जीवन में अति दुःख से मनुष्य का अंत भी हो सकता है। कुछ लोग अर्धांगवायू, कुछ पक्षघात, तो कुछ पोलियो जैसे रोगो से ग्रस्त है। ऐसे रोगो का एक कारण मनुष्य का निसर्ग के बिच आना यह भी हो सकता है। शरीर सुख के लिए नियमों के पालन करने की आवश्यकता होती है।

इसी प्रकार निसर्ग नियम के लिए भी यह लागु होता है। इस निसर्ग नियम का संतुलन ना रखने से आवर्षण, अतिवृष्टी,भुकंप जैसे महाभयंकर परिस्थितीयों का मनुष्य को सामना करना पड रहा है। जमीन से धातु का उत्खनन
करने से गुरुत्वाकर्षण शक्ति में बाधा उत्पन्न हो जाती होगी ऐसी मुझे आशंका है। चीन में ज्वालामुखी , भुकंप, समुद्र ,त्सुनामी जादा मात्रा मे होती है, इसका मुख्य कारण निसर्ग के विरोधमें मनुष्य का कार्य करना यह हो सकता है।

पंचमहाभुतोसे युक्त निसर्ग और मानव देह में होनेवाले चित्र-विचित्र परिणाम इन सभी परिस्थितीयों के लिए सर्वव्यापी निर्गुण, निराकार, सभी अंतःकरण में बसा हूवा परमपिता परमेश्वर है। मनुष्य को चैतन्य परमेश्वर के अद्‌भुत शक्ति की जानकारी न होने के कारण सच्चा ईश्वर हम नही पहचान सके।

और भारी चिज(मूर्ति) की हम पूजा करने

लगे। आज तक हम हमारे माता पिता जिन्हे भगवान मानते आये है, वे भी इस भूतल पर घुमकर उन्होने अपना जीवन व्यतित किया है।

कुछ समय के पश्चात उनकी ही स्मृती मे मंदीर बनाये गये।

अगर वे सच्चे ईश्वर है तो निसर्ग के उपर होनेवाले महाभयंकर आपत्ति का निवारण क्यों नही कर रहे है। जैसे भूकंप, त्सूनामी आदि को टालकर भयंकर वित्त और मनुष्यहानी बचाई जा सकती है। बिजली गिरने से मनुष्य हानी होती है। इन जडत्व देवोंसे यह हानी टाली जा सकती है क्या।

यह महाभयंकर विनाश पृथ्वी के उपर का तांडव अगर टाला जा सकता है तो पूजा,तीर्थ, भजन किर्तन, यज्ञ इन सारे कृत्यों को अर्थ रहा जाता है। अन्यथा यह सभी व्यर्थ है। मुझे सारे पंथो को यह कहना है की, उपरोक्त सभी आपत्ति निसर्ग की अवकृपा से आयी है। फिर यह जडत्व

प्राप्त ईश्वर वहाँ क्या कर सकता है। फिर हमे

सोचना चाहिये, की सच्चा ईश्वर कौन है। इसके उपर गंभीरता से विचार करना पडेगा। पंचमहाभुतोंसे निर्माण होनेवाले व्यवहार यही ईश्वर के सच्चे कार्य है। यही पंचमहाभुत अनादि काल से जहाँ वहाँ जिस स्थिती में थे, उसी स्थिती में है। इस पंचमहाभुत परमेश्वर की पहचान करके उसके

अनुसार व्यवहार करना यही उचित ईश्वर कार्य शक्ति माना जायेगा। इसके लिये ध्यानमय जीवन व्यतित किजीये जिससे आत्मबल बढेगा और अज्ञान और अंधश्रध्दा दूर होगी। अनादि काल से चलती आ रही यही भारतीय अध्यात्मिक संस्कृती है। हमारे भारतीय ऋषी मुनीयों की वैदिक परंपरा और दिव्य संस्कृती का यही बोध है।

समाधि साक्षात्कार के संदर्भ में सत्संग चर्चाः-

श्री परमहंस फुलाजी बाबा ने अपने आश्रम में एक दिन भक्त गणों को सत्संग चर्चा में समाधि साक्षात्कार इस विषय पर निम्न प्रार से बोध प्रतिपादन किया है-

मनुष्य में परमेश्वर प्राप्ति के लिये भक्तियोग साधना के लिये प्रयत्न करनेवाले शत प्रतिशत लोगो में निन्नानवे प्रतिशत लोग प्रापंचिक और शारीरिक सुख प्राप्ति के लिये प्रयत्न करते है। परमेश्वर प्राप्ति के लिए प्रयत्न करनेवाले एक प्रतिशत लोग ही परमेश्वर की प्राप्ति के निकट पहुच पाते है। इसका मुख्य कारण यह है की परमेश्वर प्राप्ति के लिये लगने वाली भक्ति अथवा ध्यान साधना को साधन काल में आगे जाने के लिए अनेक अवस्थाऐं पार करनी पडती है। भक्ति अथवा ध्यानसाधना बहिरंग न होकर अंतरंग होती है। और वह अंतरंग प्रकार से ही करनी पडती है। जिसकी चार अवस्थाएँ है १) तुर्या २)उनमुनि ३)समाधी ४) निर्विकल्प समाधि। इन चार अवस्थाओं को पार करके अंत में ज्योतिस्वरुप परमेश्वर के दर्शन होते है। उसे मुक्ति कहा जाता है। आज के आधुनिक युग में बहुत सारे लोग जटा, दाढी धारण करके आढे तेढे तिलक लगाकर हाथ मे शंकर त्रिशुल लेकर बन में भटककर अपने ही मन से साधना करते हूए हमे दिखाई देते है। आज तक अनेक लोग परमेश्वर की प्राप्ती के लिये बहूत सारे प्रयत्न करके थक गये है। उन्हे कुछ भी साध्य नही हूवा। न आगे जाकर होगा बिना सद्‌गुरु के सिवा।

एखादे व्यक्ति को कम अधिक आत्मज्ञान का अनुभव पहली अवस्था में हो सकता है। जिसे तुर्यां या उनमुनि अवस्था समझना चाहिए। लोग इस क्षणिक भ्रम में फंसकर होनेवाले सिध्दी चमत्कारोंमें अटके रहते है और अपना अनमोल जीवन व्यर्थ बिता देते है। इस बात का विवेचन महापुरुषों ने अपने आत्म अनुभव व्दारा अपने सध्विचार ग्रंथ में लिखकर स्पष्ट किया है। जिससे आत्म अनुभव की पहचान हो सकती है।

शक्तिपात योगरहस्य अर्थात सिध्दमहायोग शास्त्र ग्रंथ के ग्यारह अध्याय के पान क्रमांक ३७३ में समाधी साक्षत्कार का विस्तार से वर्णन किया गया है। वर्तमान परिस्थिती में हम अगर विचार करते है तो श्री परमहंस सदगुरु फुलाजी बाबा सहज समाधि साक्षात्कार और अष्टसिध्दी प्राप्त करके इस भारत देश के असंख्य भक्तों को शक्तिपात दिक्षा देने का महान कार्य कर रहे है।

हम इस दिव्य ज्ञान के बारेमें बाबा को पुछते है तो, वे कहते है, की मै अभी संत नही हूवा हूँ। इस प्रकार के उत्तर प्राप्त होते है। सच्चे महात्मा की सुगंध दूर दूर तक फैल जाती है ऐसा कहकर बाबा सत्य आत्मज्ञानका प्रतिपादन विश्व को देने का विचार रखते है। हमारे देश में जितने भी संत महात्मा हुये है। उन्होने दिव्यज्ञान प्राप्ती करके विश्व के कल्याण के लिये अपना किमती समय खर्च किया है और विश्व का कल्याण किया है। अज्ञान, अंधकार, अंधश्रध्दा सोये हुए देश को योग्य ज्ञान संस्कार देकर जगाया है और सच्चे मानव धर्म की पहचान कराई है।

श्रीकृष्ण व्दापार युग में, श्रीराम त्रेता युग में, उसके पश्चात श्री शंकराचार्य , श्री दयानंद सरस्वती, श्री रमण महर्षी, श्री वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी, श्री संत तुकाराम, श्री संत एकनाथ, श्री रामकृष्ण परमहंस, श्री स्वामी विवेकानंद, साईबाबा, संत मिराबाई, संत जनाबाई, श्री संत ज्ञानेश्वर, राष्ट्रसंत तुकडोजी, श्री मुंगसाजी बाबा, श्री दत्तात्रय आदि संत महात्माओं ने समाधि साक्षात्कार की अवस्था को प्राप्त करके विश्व के मानव जीवन का कल्याण किया है।

इस समाधि साक्षात्कार के परे और एक अवस्था है। जिसे निर्विकल्प समाधि कहते है। यह दशा परमेश्वरी दशा है। कोटि सूर्य का तेज एकत्र करने से दिव्य प्रकाश पुंज दिखाई देता है। यह प्रकाशपुंज एकत्र रुपमें दिखाई देता है, उसी प्रकार प्रज्वलीत प्रकाश को किसी की आवश्यकता नही होती है। इसलिए प्रकाशरुप ईश्वर को बाकी प्रकाश की आवश्यकता नही होती है।

इस प्रकाशरुप परमेश्वर की आवश्यकता संपूर्ण विश्व को होती है। अतःशुध्द स्वरुप परमेश्वर प्राप्ति के लिए सभी प्रयत्नशील होते है।इस विदेही निर्विकल्प समाधि को प्राप्त हूए महात्मा श्री गजानन महाराज, श्री भुराजीबाबा, श्री घोगले बाबा, श्री विक्तू बाबा, श्री रामरेड्डीताता, श्री अनुसया माता आदि को निर्विकल्प समाधि प्राप्त होकर उन्हें परमेश्वर स्वरुप प्राप्त हूवा है।

निर्विकल्प समाधि से विश्व में परमेश्वरी कार्य का अविष्कार होता है। पंरतु प्रत्यक्ष बोधरुप नही होता है। इन संत महात्माओं की ज्ञान की तुलना में मै अभी भी अज्ञानी हूँ, ऐसा फुलाजी बाबा कहते है।

ध्यान का जीवन में स्थान-

अपने आत्मशक्ति से सिध्द सतगुरु से शक्तिपात व्दारा होनेवाली जागृती यह हमे मिलनेवाली एक महान देन है। यह शक्ति विकसीत होकर उसका कृपावर्षाव प्राप्त करके हमे सिध्द सतगुरु का मार्गदर्शन समझकर ग्रहण करना है। अनुशासनबध्द जीवन यही ध्यान साधना का बडा आधार है। इसके आधार से ध्यान के सहज स्थिती की अवस्था की प्रचिती आती है। इसी प्रकार ध्यान की नकारात्मक भावनाओं की गुत्थी सुलझाने में मदद होती है।

१) ध्यान साधना का महत्वपूर्ण अंग है आसन। २) आधी साधावा आसन, मग साधावा अहंभाव। योग का संपूर्ण ढाँचा आसन की पैया पर खडा है। जिस आसन में साधक दीर्घकाल आनंदित होकर बैठ सकता है उस आसन को उत्तम समझना चाहिए।

सभी से उत्तम सहज आसन ध्यान के लिये वह होगा जिसमें बैठते समय रिढ की हड्डी सिधी रखनी पडती है। यह बात महत्वपूर्ण है। पीठ सिधी रखनेसे चित्त हृदय स्थानपर होता है। इस आसन को सहज आसन भी कहा जाता है।

ध्यानसाधना निंरतर आचरण के लिये व्यवहार्य मार्गदर्शक सुचनायें निम्नप्रकारसे दी गयी है।

ध्यान करने का निर्धार यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात है। ध्यान करने के लिए कोई भी समय का बंधन नही होता है। थोडा समय भी इसके लिये उपयुक्त होता है। विशेष रुप सें प्रातःकाल के तीन बजे से छह बजे का समय ध्यान को बैठने के लिए अतिशय पोषक होता है। इस समय मन बिना सायास अंतर्मूख होता है। इस समय को ब्रम्हमुहूर्त कहा जाता है।

दिन में किसी भी समय पर, समय की सुविधा के अनुसार ध्यान कर सकते है। पंरतु प्रतिदिन उसका समय निश्चित कर लेना चाहिये। घर की एखादी खोली अन्यथा कोने में बैठकर ध्यान को निश्चित रुप सें उसी स्थान पर आसन पर अथवा चटाई पर बैठकर करना उपयुक्त होता है। इससे मन को आंतरिक साम्राज्य में प्रवेश करने की प्रेरणा मिलती है। शुरु में पंद्रह से बिस मिनट तक बैठने का समय अभ्यास के लिए उचित रहेगा। धिरे धिरे यह समय बढाते जाना चाहिये। पूर्व तैयारी का विश्वास हो जाने पर एक घंटे तक भी ध्यान को बैठ सकते है।

ह्रदय के आनंद के तुषार मन संकीर्तन में उडने लगते है। नामसंकीर्तन मन को शांत करके ध्यान की प्राथमिक तैयारी करके नामसंकीर्तन सामुदायिक अथवा अकेले नियमीत रुपसे कर सकते है। संतगुरु ग्रंथ का अभ्यासपूर्वक वाचन सिध्द महायोग समझकर इसे करने से और भी सुलभ हो जाता है। इसके नित्य वाचन से हमारे मार्ग में आनेवाली कठीनाईयों को दूर करना सहज संभव हो जाता है।

सत्संग, सततत्व की संगत इसका अर्थ है, सभी में वास करनेवाले सत्य का स्पर्श और अविष्कार। यह अविष्कार एक दुसरे के अनुभव के श्रवण से होता है और आंतरिक मन से समझकर लेना यह भी सत्संग कहलाता है। सत्संग का दूसरा अर्थ यह भी है, सत्य तत्व की जानकारी प्राप्त करना। इसके लिये प्राथमिक, उत्कट, ओंठ इस अनुषंग से एक दुसरे के सहवास से अध्यात्मिक अनुभव की आदान-प्रदान होना अत्यंत उपयुक्त है।

सत्य तत्त्व का साक्षात अवलोकन अर्थात साक्षात्कारी सत्वपुरुष का दर्शन सदगुरु के सहवास में कालक्रमण करना यह सर्वश्रेष्ठ और अत्यंत शक्तिपूर्ण सत्संग होता है। ध्यान के संबंध में कुछ विचार जिस प्रकार हम स्पष्ट कर रहे है उस प्रकार हमे भी ध्यानमग्न होना चाहिये। स्वयं को शांत बैठकर अपने चित्त आत्मस्वरुप पर अंतर्यामी वास करनेवाले उस ज्ञान पर ध्यान केंद्रित किजीये। अपना श्वासोच्छवास नैसर्गीक लय के साथ चलने दिजीये। उसे जान बुझकर रोखने की आवश्यकता नही होती है। अपने आत्मस्वरुप में मग्न हो जाईये।

अपना मन और इंद्रिय अंतर्मुख किजीये। शुध्द आत्मभाव में स्वयं को भूल जाईये। मन में विचार आते है तो आने दिजीये। जैसे वे आयेंगे उसी प्रकार वापस जायेंगे। वह विचार जीस स्थान से उठते है उसके उपर ध्यान केंद्रित किजीये। हम मन के साक्षी है, इस भाव से ध्यान किजीये। अगर ध्यान की आवश्यकता नही रहती है, उस समय को मान लिजीये की हमारा ध्यान लग गया है। विचार शांत होते ही आत्मस्वरुप के प्रकाश अंतर्यामी प्रकट होने लगेंगे। अगर मन तुरंत निर्विकार नही होता है तो वे विचार जबरदस्ती से दबाने का प्रयत्न मत किजीये। अंतर्यामी उठनेवाले विचार और नष्ट होनेवाले विचार सभी आत्म तत्व का ही रुप है। इस बात पर विश्वास रखके मन का पुरा आदर रखिये। जिससे वह अपने आप ही स्थिर होने लगेगा। चित्त को स्थिर होने के लिये नैसर्गिक रुप से प्रत्येक मनुष्य में होनेवाले इक्कीस हजार छह सौ अजपाजप बिज पर लक्ष्य केंद्रित करना पडता है।

इसे बिजमंत्र कहते है। सोःहम् अथवा ओम यह आत्मबीज है। अपने श्वासोच्छवास के व्दारा नासिका के माध्यम से हवा अंदर लेते समय सों और हवा बाहर छोडते समय हम् अर्थात सोःहम् ऐसा ध्वनि उत्पन्न होता है। इस क्रिया को ही अजपाजप मंत्र जप कहा जाता है। इसे अनेक नाम से संबोधीत किया जाता है। जैसे आजपाजप मंत्र, एकादश मंत्र, प्रणव जप, व्दादश मंत्र, पंचराक्षरी मंत्र। इन सभी मंत्रो का उद्देश आत्मबिज स्वरुप श्वासोच्छवास के व्दारा आता है, इसलिये ध्यान के व्दारा अपने अंतर से निकलनेवाले श्वास पर लक्ष्य केंद्रित किजीये और यही बीज अथवा बीज मंत्र है। ध्यान में स्वयं को भूल जाईये।

किसी भावना का आपके उपर प्रभाव होता है तो घबराईये मत। आंतर शक्ति में अनेक तंत्रसाधना है। प्रक्रिया और भावनाएँ भरी हूयी है। प्रत्येक बात में उसका विलासकार्य दृष्टि में पडता है। इसलिये प्रत्येक विषय पर उसका प्रभुत्व होता है। और वह अपने आत्म स्वरुप से एकरूप हूई है। अंतर्मुख हो जाईये। आंतरशांति यह ध्यान का मुख्य उद्दिष्ट है।ध्यान में अच्छे दृष्य दिखाई देना यह स्वाभाविक है। पंरतु यह जरुरी भी नही है। हमे जरुरत है वह अंतरानंद के सभी इंद्रिय शांत हो जाने के पश्चात हमें आनंदानुभव अगर आने लगता है तब समझ लिजीये हमे सत्यज्ञान प्राप्त होने लगा है। यह विश्व आनंदरुप है। आनंद रग रग में भरा है। उसकी ध्यान के व्दारा खोज किजीये। और उसको प्राप्त कर लिजीये।

नकारात्मक भावना की तुलना में मै शुध्द हुं, मै आनंद रुप हुं इस भावना को दृढ किजीये। स्वयं पर विश्वास रखिये। अपना व्यक्तित्व दिव्य रुप से भर दिजीये। मै ईश्वर से अलग नही हूँ अथवा ईश्वर भी मुझसे अलग नही है इस भावना से ध्यान करना चाहिये। हमे ईश्वर प्राप्ती अवश्य होगी। इतना ही नही हम स्वयं ही ईश्वर का रुप बन जायेंगे।

स्व स्वरुप से ध्यान किजीये।
स्व स्वरुपका सन्मान किजीये।
स्व स्वरुप को पीचानिये।

परमात्मा का अंतर्यामी आपके ही स्वरुप में वास कर रहा है।

मेरी साधना यह ईश्वर है और मुझे दिखने वाली प्रत्येक वस्तु यह भी ईश्वर है। यह भावना रखनी चाहिये। मै एक व्यक्ति हूँ। मामुली हूँ, मर्यादित हूँ। यह अनादि काल से हमे सिखाया गया है। इसलिये मै ईश्वर हूँ, इस भावना का स्विकार करना हमारे लिये कठीन हो जाता है। हम पापी है इस प्रकार का मार्गदर्शन ही हमे हूवा है। इसलिये इस बात पर हमारा विश्वास निश्चित हो चुका है। इस कारण परम शुध्द और पाप रहित आत्मस्वरुप के उपर हम पाप की कल्पना का आरोप करते रहते है। इसलिये आत्मरुप के उपर हमारी श्रध्दा सहजता से नही बैठती है। उसके उपर वृत्ती एकाग्र भी नही होती है। मै विशिष्ट प्रकार का हूँ, मै पापी हूँ, मै छोटा हूँ, मै अज्ञानी हूँ इस प्रकार से विचार और मार्गदर्शन हमे प्राप्त हूये है। इसलिये हमे दारिद्रय प्राप्त होने लगता है।

संत महात्मा कहते है अंतर्मुख होकर आत्मचिंतन किजीये। जहाँ तुम्हे एकत्व का अनुभव होगा, हम और परमेश्वर में कुछ भी भिन्नता नही है, परमेश्वर हमारे अंतर्मन में बसा है। इस बात की अनुभूती तुम्हे होगी। यह अनुभव जबतक हमे नही आता है तब तक हम शांत चित्त नही हो सकते।

प्रत्येक मनुष्य विश्वशांति के संबंध में चर्चा करते रहता है। हम जब सार्वजनिक कार्यक्रम में जाते है तब उस जगह पर विभिन्न प्रकार के लोग इकट्ठा होते है। उनमें से बहुत सारे दर्शन के लिये भी आते है। वे कहते है विश्वशांति प्राप्त होने दिजीये। किसी भी प्रकार का मानसिक दबाव मत आने दिजीये। हमें किताबों में भी विश्वशांति के बारेमें पढने के लिये मिलता है। कुछ परिचय पत्रिकाओं में भी विश्वशांति के गप्पे लगाये जाते है। अंत में विश्वशांति पर ही बात आकर रुक जाती है। पंरतु यह विश्व कहाँ है? आप और मै इससे ही बने है। हमारे अंतर्मन में शांति नही है तो विश्व में शांति कहाँ से आयेगी? हमारे अंतर्मन में शांति का अनुभव होना चाहिये। केवल विश्वशांति का कार्यक्रम प्रकट हो जायेगा इस भ्रम में मत रहीये।

कोई भी कम्प्युटर का बटण दबाकर विश्वशांति का कार्यक्रम शुरु नही कर सकता है। इसकी शुरुआत हमारे अंतर्मन से होनी चाहिये। यह हमे चाहे कितना भी कठीन क्यों न लगे पंरतु उससे शांति अवश्य निर्माण होती है। अंतर्मुख हो जाईये, ध्यान लगनेसे हमारी शांति हमारे अंतर्मन में प्रकट होने लगेगी।

कहाँ है स्वर्ग?कहाँ है नरक? यह दोनो हमारे ही अंतर्यामी है। प्रत्येक व्यक्ती स्वर्ग निर्माण कर सकता है। मनुष्य को इच्छा स्वातंत्र्य है क्या? या फिर हर एक बात प्रारब्ध के अनुसार ही होती है? यह प्रश्न लोग पुछते है। प्रश्न यह है की मनुष्य में अपार शक्ति वास करती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने इच्छा स्वातंत्र्य से अपने कार्य निर्माण कर सकता है।

अंतर्मुख होकर ध्यान किजीये। हमे अपना आनंद और शांति दोनो प्राप्त हो जायेंगे ऐसा संत सदगुरु फुलाजी बाबा कहते है।

महत्वपूर्ण ज्ञानोपयोगी उपनिषद एवम् ग्रंथ

	ग्रंथ	लेखक
१)	शक्तिपात योग रहस्य अर्थात सिध्द महायोग शास्त्र	श्री केशव रामचंद्र जोशी
२)	पांतजली योगदर्शन भारतीय मानसशास्त्र	श्री कृष्णाजी केशव कोल्हटकर तृतीय आवृत्ती १८९७
३)	चित्तशक्ति विलास	श्री स्वामी मुक्तानंद (गणेशपुरी) प्रथम आ.१९७०, व्दि.आ.१९९७
४)	ध्यान सोपान	स्वामी चिव्दिलासानंद, सिध्दयो प्रकाशन, चेन्नई
५)	ग्रामगीता	राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, महाराष्ट्र
६)	सत्यार्थप्रकाश	स्वामी दयानंद सरस्वती
७)	मंडुकोपनिषद	
८)	छांदयोगोपनिषद	
९)	छांदयोगोपनिषद	
१०)	कुंडलिनी जागरणोपनिषद	
११)	भारतिय तत्वशास्त्र	एटूकुरी बलराम, मुर्ति.१९८९
१२)	विश्वदर्शन भारतिय चिंतन भा.१ विश्वदर्शन भारतिय चिंतन भा.२	नंदूरी राम मोहन १९९७
१३)	ज्ञानेश्वरी	
१४)	भगवद्गीता	
१५)	तुकारामगाथा	
१६)	दास बोध	

आत्मअनुभव को परखने के लिए हरिपाठ आदि ग्रंथो का अभ्यास किजीये।

भारतीय वैदिक परंपरा के अनुसार दि गयी दिव्य शक्तिपात योगदिक्षा :-

१) श्री वसिष्ठ ऋषी से :-
श्री रामचंद्र को शक्तिपाद दिक्षा प्राप्त

२) श्री महा विष्णु से :-
श्री ध्रुव को शंखस्पर्शव्दारा शक्तिपात दिक्षा प्रदान

३) श्री दत्तात्रय से :-
श्री यदूराजा को आलिंगन देकर स्पर्श दिक्षा प्रदान

४) श्री कृष्ण से :-
श्री उध्दव को स्वानंदनिमग्नता शक्तिपात दिक्षा

५) श्री कृष्ण से :-
श्री अर्जुन को शक्तिपातव्दारा निजानंद प्रदान

६) श्री शंकर से :-
श्री हरिनाथा को शक्तिपातव्दारा स्वस्वरुप दर्शन प्रदान

७) श्री निवृत्तीनाथ से :-
श्री ज्ञानेश्वर को सिध्दपंत शक्तिपात दिक्षा प्रदान

८) श्री दत्तात्रय से :-
श्री जनार्दन स्वामी को शक्तिपात दिक्षा प्राप्त

९) श्री महर्षी व्यास से :-
श्री राघव चैतन्य को शक्तिपात दिक्षा प्रदान

१०) श्री संत तुकाराम से :-
श्री निळोबा को शक्तिपात दिक्षा नितात्म स्थिती

११) श्री गोरक्षनाथ से :-
श्री सोहिरोबानाथ अंबिये इनको शक्तिपात दिक्षा प्रदान

१२) श्री रघुनाथ से :-
श्री निरंजन को चैतन्य शक्तिपात दिक्षा प्रदान

१३) श्री प्रभू रामचंद्र से :-
श्री समर्थ रामदास स्वामी को शक्तिपात दिक्षा प्रदान

१४) श्री रामदास स्वामी से :-
श्री शिवाजी महाराज को शक्तिपात दिक्षा प्रदान

उपरोक्त भारतीय संस्कृती में शक्तिपात दिक्षा परंपरा अपने ऋषी-मुनीयोंने शक्ति संक्रमण व्दारा एक से दुसरे महापुरुष में संक्रमित करके यह आत्मज्ञान की परंपरा शुरु रखी है, यह दिखाई देता है।

इस शक्तिपात दिक्षा की परंपरा चलानेवाले श्री परमहंस फुलाजीबाबा आज हयात है। उनके व्दारा अनेक मनुष्य को यह शक्तिपात दिक्षा दी जा रही है। इस दिक्षा का सभी लाभ उठायें यही सद्भावना व्यक्त करते है।